Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2582-0095

मानव–जीवन पर ज्योतिषीय प्रभाव

प्रभाकर शर्मा
शोध छात्र, संस्कृत,

डॉ. मनीष खैमरिया
मार्गदर्शक,
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष संस्कृत,
एम.एल.बी. कॉलेज, ग्वालियर, मध्य प्रदेश, भारत।

Article Info
Volume 3 Issue 6
Page Number: 20-23
Publication Issue :
November-December-2020
Article History
Accepted : 15 Nov 2020
Published : 05 Dec 2020

सारांश– सौर'–जगत् के सात ग्रह मानव–जीवन के विभिन्न अवयवों के प्रतीक हैं। इन सातों की क्रिया–फल द्वारा ही जीवन का संचालन होता है।

मुख्य शब्द :– मानव–जीवन,ज्योतिषीय, सौर'–जगत्, कर्मबन्ध, दर्शनशास्त्र।

मनुष्य स्वभाव से ही अन्वेषक प्राणी है। वह सृष्टि की प्रत्येक वस्तु के साथ अपने जीवन का तादाम्य सम्बन्ध स्थापित करना चाहता है। उसकी इसी प्रवृति ने ज्योतिष के साथ जीवन का सम्बन्ध स्थापित करने के लिए बाध्य किया है। फलतः वह अपने जीवन के भीतर ज्योतिष तत्वों का प्रत्यक्ष दर्शन करना चाहता है। इसी कारण वह शास्त्रीय एवं व्यवहारिक ज्ञान द्वारा प्राप्त अनुभव को ज्योतिष की कसौटी पर कसकर देखना चाहता है कि ज्योतिष का जीवन में क्या स्थान है? समस्त भारतीय ज्ञान की पृष्ठभूमि दर्शनशास्त्र है।[1]

यही कारण है कि भारत अन्य प्रकार के ज्ञान को दार्शनिक मापदण्ड द्वारा मापता है। इसी अटल सिद्धान्त के अनुसार वह ज्योतिष को भी दृष्टिकोण से देखता है। भारतीय दर्शन के अनुसार आत्मा अमर है इसका कभी नाश नहीं होता है, केवल यह कर्मो के अनदि प्रवाह के कारण पर्यायों को बदला करता है। अध्यात्मशास्त्र का कथन है कि दृश्य सृष्टि केवल नाम रूप या कर्म ही नहीं है, किन्तु इस नामरूपात्मक आवरण के लिए आधारभूत एक अरूपी स्वतन्त्र और अविनाशी आात्मतत्व है तथा प्राणीमात्र के शरीर में रहनेवाला यह तत्व नित्य एवं चैतन्य है, केवल कर्मबन्ध के कारण वह परतन्त्र और विनाशीक दिखलाई पड़ता है। वैदिक दर्शनों में कर्म के संचित प्रारब्ध और क्रियमाण ये तीन भेद माने गये हैं। किसी के द्वारा वर्तमान क्षण तक किया गया जो कर्म है चाहे वह इस जन्म में किया गया हो या पूर्व जन्मों में वह सब संचित कहलाता है। अनेक जन्म–जन्मान्तरों के संचित कर्मो को एक साथ भोगना सम्भव नहीं है, क्योंकि इनसे मिलनेवाले परिणामस्वरूप फल परस्पर विरोधी होते है, अतः इन्हें एक के बाद एक कर भोगना पड़ता है। संचित में से जितने कर्मो के फल को पहले भोगना शुरू होता है, उतने ही को प्रारब्ध कहते हैं। तात्पर्य यह है

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

कि संचित अर्थात् समस्त जन्म–जन्मान्तर के कर्मों के संग्रह में से एक छोटे भेद को प्रारब्ध कहते हैं। यहाँ इतना स्मरण रखना होगा कि समस्त संचित का नाम प्रारब्ध नहीं, बल्कि जितने भाग का भोगना आरंभ हो गया है, प्रारब्ध है।[2] जो कर्म कभी हो रहा है या जो अभी किया जा रहा है, वह क्रियमाण है। इस प्रकार इन तीन तरह के कर्मों के कारण आत्मा अनेक जन्मों–पर्यायों को धारण कर संस्कार अर्जन करता चला आ रहा है।

आत्मा के साथ अनादिकालीन कर्म–प्रवाह के कारण लिंग शरीर–कार्मण शरीर और भौतिक स्थूल शरीर का सम्बंध है। जब एक स्थान से आत्मा इस भौतिक शरीर का त्याग करता तो लिंगशरीर उसे अन्य स्थूल शरीर की प्राप्ति में सहायक होता है। इस स्थूल भौतिक शरीर में विशेषता यह है कि इसमें प्रवेश करते ही आत्मा जन्म–जन्मान्तरों के संस्कारों की निश्चित स्मृति को खो देता है। इसलिए ज्योतिर्विदों ने प्राकृतिक ज्योतिष के आधार पर कहा है कि यह आत्मका मनुष्य के वर्तमान स्थूल शरीर में रहते हुए भी एक से अधिक जगत् के साथ सम्बंध रखता है। मानव का भौतिक शरीर में रहते हुए भी एक से अधिक जगत् के साथ सम्बंध रखता है। मानव का भौतिक शरीर प्रधानतः ज्योतिः उपशरीर Astrals's body द्वारा नाक्षत्र जगत् से, मानसिक उपशरीर द्वारा मानसिक जगत् से प्रभावित होता है तथा अपने भाव, भौतिक जगत् से सम्बद्ध है। अतः मानव प्रत्येक जगत् से प्रभावित होता है तथा अपने भाव, विचार और क्रिया द्वारा प्रत्येक जगत् को प्रभावित करता है। उसके वर्तमान शरीर में ज्ञान, दर्शन, सुख, वीर्य आदि अनेक शक्तियों का धारक आत्मा सर्वत्र व्यापक है तथा शरीर प्रमाण रहने पर भी अपनी चैतन्य क्रियाओं द्वारा विभिन्न जगतों में अपना कार्य करता है। मनोवैज्ञानिकों ने आत्मा की इस क्रिया की विशेषता के कारण ही मनुष्य के व्यक्तिव को बाह्य और आंतरित दो भागों में विभक्त किया है।

बाह्य व्यक्तित्व– वह है जिसने इस भौतिक शरीर के रूप में अवतार लिया है। यह आत्मा की चैतन्य क्रिया की विशेषता के कारण अपने पूर्वजन्म के निश्चित प्रकार के विचार, भाव और क्रियाओं की ओर झुकाव प्राप्त करता है तथा इस जीवन के अनुभवों के द्वारा इस व्यक्तित्व में मिलने का प्रयास करता है।

आन्तरिक व्यक्त्वि– वह है जो अनेक बाह्य व्यक्तित्वों की स्मृतियों, अनुभवों और प्रवृत्तियों का संश्लेषण अपने में रखता है।

बाह्य और आंतरिक इन दोनों व्यक्तित्व सम्बंधी चेतना के ज्योतिष में विचार, अनुभव और क्रिया ये तीन रूप माने गये हैं। बाह्य व्यक्तित्व के तीन रूप आंतरिक व्यक्तित्व के इन तीनों रूपों से सम्बद्ध हैं, पर आंतरिक व्यक्तित्व के तीन रूप अपनी निजी विशेषता और शक्ति रखते हैं, जिससे मनुष्य के भौतिक, मानसिक और आध्यामिक इन तीनों जगतों का संचालन होता है। मनुष्य का अन्तःकरण इन तीनों व्यक्तित्व के उक्त तीनों रूपों को मिलाने का कार्य करता है। दूसरे दृष्टिकोण से यह कहा जा सकता है कि ये तीनों रूप एक मौलिक अवस्था में आकर्षण और विकर्षण की प्रवृत्ति द्वारा अन्तःकरण की सहायता से संतुलित रूप से प्राप्त होते हैं। तात्पर्य यह है कि आकर्षण की प्रवृत्ति बाह्य

व्यक्तित्व को और विकर्षण की प्रवृत्ति आंतरित व्यक्तित्व को प्रभावित करती है और इन दोनों के बीच में रहने वाला अन्तःकरण इन्हें संतुलन प्रदान करता है। मनुष्य की उन्नति और अवनति इन संतुलन के पलड़े पर ही निर्भर है।[3]

मानव जीवन के बाह्य व्यक्तित्व के तीन रूप और आंतरित व्यक्तित्व के तीन रूप तथा एक अन्तःकरण इन सात के प्रतीक सौर–जगत् में रहने वाले 7 ग्रह माने गये हैं। उपयुक्त 7 रूप सब प्राणियों के एक से नहीं होते हैं, क्योंकि जन्म–जन्मान्तरों के संचित, प्रारब्ध कर्म विभिन्न प्रकार के हैं, अतः प्रतीक रूप ग्रह अपने–अपने प्रतिरूप्य के सम्बंध में विभिन्न प्रकार की बातें प्रकट करते हैं। प्रतिरूप्यों की सच्ची अवस्था बीजगणित की अव्यक्त मान कल्पना द्वारा निष्पन्न अंकों के समान प्रकट हो जाती है।

प्रथम कल्पनानुसार बाह्य के तीन रूप और आंतरिक व्यक्तित्व के तीन रूप तथा एक अन्तःकरण इन सातों प्रतिरूप्यों के प्रतीक ग्रह निम्न प्रकार हैं :

1. बाह्य व्यक्तित्व के प्रथम रूप–विचार का प्रतीक बृहस्पति है। यह प्राणीमात्र के शरीर का प्रतिनिधित्व करता है और शरीर संचालन के लिए रक्त प्रदान करता है। जीवित प्राणी के रक्त में रहने वाले कीटाणुओं की चेतना से इसका सम्बंध रहता है।[4]
2. बाह्य व्यक्तित्व के द्वितीय रूप का प्रतीक मंगल है। यह इन्द्रियज्ञान और आनन्देच्छा का प्रतिनिधित्व करता है। जितने भी उत्तेजक और संवेदनाजन्य आवेग हैं उनका यह प्रधान केन्द्र है। बाह्य आनन्ददायक वस्तुओं के द्वारा यह क्रियाशील होता है और पूर्व की आनन्दायक अनुभवों की स्मृतियों का जागृत करता हैं वांछित वस्तु की प्राप्ति तथा उन वस्तुओं की प्राप्ति के उपायों के कारणों की क्रिया का प्रधान उद्‌गम है। यह प्रधान रूप से इच्छाओं का प्रतीक है।
3. बाह्य व्यक्तित्व के तृतीय रूप का प्रतीक चन्द्रमा है, यह मानव पर शारीरिक प्रभाव डालता है और विभिन्न अंगों तथा उनके कार्यों में सुधार करता है। वस्तु–जगत् से सम्बंध रखने वाले पिछले मस्तिष्क पर इसका प्रभाव पड़ता हैं बाह्य जगत् की वस्तुओं द्वारा जो क्रियाएँ होती हैं, उनका इससे विशेष सम्बंध है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि चन्द्रमा स्थूल शरीरगत चेतना के ऊपर प्रभाव डालता है तथा मस्तिष्क में उत्पन्न होने वाले परिवर्तनशील भावों का प्रतिनिधि है।
4. आंतरिक व्यक्तित्व के प्रथम रूप का प्रतीक शुक्र है, यह सूक्ष्म मानव चेतनाओं की विधेय क्रियाओं का प्रतिनिधित्व करता है। पूर्णबली शुक्र निःस्वार्थ प्रेम के साथ प्राणीमात्र के प्रति भ्रातृत्व–भावना का विकास करता है।
5. आंतरिक व्यक्तित्व के द्वितीय रूप का प्रतिनिधि बुध है। यह प्रधान रूप से आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक है। इसके द्वारा आंतरिक प्रेरणा, सहेतुक–निर्णयात्मक बुद्धि, वस्तु–परीक्षण शक्ति, समझ और बुद्धिमानी आदि का विश्लेषण किया जाता है। इस प्रतीक में विशेषता यह रहती है कि गंभीरतापूर्वक किये गये विचारों का विश्लेषण बड़ी खूबी से करता है।

6. आंतरिक व्यक्तित्व के तृतीय रूप का प्रतिनिधि सूर्य है। यह पूर्ण दैवत्व की चेतना का प्रतीक है, इसकी सात किरणें हैं जो कार्यरूप से भिन्न होती हुई भी इच्छा के रूप में पूर्ण होकर प्रकट होती हैं। मनुष्य के विकास में सहायक तीनों प्रकार की चेतनाओं के संतुलित रूप का यह प्रतीक है। यह पूर्ण इच्छा–शक्ति, ज्ञानशक्ति, सदाचार, विश्राम, शान्ति, जीवन की उन्नति एवं विकास का द्योतक है।
7. अन्तःकरण का प्रतीक शनि है। यह बाह्य चेतना और आंतरिक चेतना को मिलाने में पुल का काम करता है। प्रत्येक नवजीवन में आंतरिक व्यक्तित्व से जो कुछ प्राप्त होता है और जो मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन के अनुभवों से मिलता है, उससे मनुष्य को यह वृद्धिगत करता है। यह प्रधान रूप से 'अहं' भावना का प्रतीक होता हुआ भी व्यक्तिगत जीवन के विचार, इच्छा और कार्यों के संतुलन का भी प्रतीक है। विभिन्न प्रतीकों से मिलने पर यह नाना तरह से जीवन के रहस्यों को अभिव्यक्त करता है। उच्च स्थान अर्थात् तुला राशि का शनि विचार और भावों की समानता का द्योतक है।[5]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सौर'–जगत् के सात ग्रह मानव–जीवन के विभिन्न अवयवों के प्रतीक हैं। इन सातों की क्रिया–फल द्वारा ही जीवन का संचालन होता है।

संकेत सूची

मनोमयः प्राणशरीरों भारूपः

आकाशात्मा सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः

सर्वरसः सर्वमिदमभ्यात्तोऽवाक्य नादरः।। छान्दोग्योपनिषद 3.14

एते ग्रहाः वलिष्ठाः प्रसूतिकाले नृणां स्वमूर्ति समम्।

कुर्युदेहम् नियवं वहवश्च समागता मिश्रम्।।

पंचसिद्धन्तिका

भारतीय ज्योतिष डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

तदैव